जैन कानून (Jain Law)

श्री. वालचंद पदमसी कोठारी, ॲड्व्होकेट, गुलबर्गा (म्हैसूर स्टेट)

प्रास्ताविक कथन

जैन धर्म स्वतन्त्र और अतिप्राचीन धर्म है। जैन धर्म, तत्त्वज्ञान, आचार और विचार पुरातन काल से चले आरहे हैं। उसी तौरपर 'जैन-लॉ' भी एक स्वतन्त्र सिद्धांत Jurisprudence है। जैनीयों के प्रथम तीर्थंकर श्री आदिनाथ भगवान् (श्रीऋषभनाथ) के ज्येष्ठ पुत्र श्री भरत चक्रवर्ती (Emperor) ने जैन कानून को बनाया था, और जैन कानून उपासकाध्ययन ग्रन्थ का एक विभाग था। लेकिन उपासकाध्ययन ग्रन्थ आजतक उपलब्ध नहीं हो पाया।

उपासकाध्ययन के आधार से लिखी हुई कुछ पुस्तकें, वर्तमान काल में प्राप्त हुई है। उनके नाम- १ भद्रबाहु संहिता, २ वर्धमान नीति, ३ अर्हन्नीति, ४ इंद्रनंदीजिन-संहिता, ५ त्रिवर्णाचार, ६ श्री आदिपुराण।

ग्रन्थों का परिचय

१. **श्रीभद्रबाहु संहिता की** रचना श्री भद्रबाहु श्रुतकेवली ने की थी। यह ग्रन्थ लगभग २४०० वर्ष पहले लिखा गया था। लेकिन यह ग्रन्थ भी आज उपलब्ध नहीं है। करीब ८०० वर्ष होने के बाद मौजुदा भद्रबाहु संहिता की रचना की जाना पाया जाता है। लेकिन इस ग्रन्थ का संकलन किसने किया मालूम नहीं हुआ।

२. **अर्हन्नीति और ३ वर्धमाननीति** को श्री हेमचंद्राचार्य ने संकलित किया ऐसा मालूम होता है।

वर्धमाननीति का संपादन श्री अमितगति आचार्य ने लगभग स. १०११ इ. में किया था। राजा भुंज के समय में श्री अमितगति आचार्य हुए थे। श्री भद्रबाहु संहिता और वर्धमाननीति के कुछ श्लोकों में समानता पायी जाती है।

४. **इंद्रनन्दी जिनसंहिता**--इसके रचयिता श्री वसुनन्दी इंद्रनन्दी स्वामी हैं। उपासकाध्ययन के आधार पर ये ग्रन्थ लिखे गए हैं।

५. **त्रिवर्णाचार**--स. १६११ इ. में श्री भट्टारक सोमसेन ने इसकी रचना की है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. **श्री आदिनाथ पुराण**—भगवत् जिनसेनाचार्य ने इ. स. ९०० शताब्दि में इस पुराण को लिखा है। वर्तमान काल में ये ग्रंथ उपलब्ध हैं, परन्तु इनमें से किसी में भी संपूर्ण जैन कानून का वर्णन नहीं मिलता। फिर भी कानून की कुछ आवश्यक बातों का इन ग्रंथों से पता चलता है।

१. ब्रिटिश अमल के काल में जैन लॉ की अवस्था

भारत में बिटिश शासन होने के बाद न्यायालय (civil courts) स्थापन हुये।

विरासत का कायदा (Succession Rights)

विभक्तपना (Partition)

दत्तक विधान (Adoption) और विधवा स्त्री का पति के जायदाद पर अधिकार (Widows' rights over her Husband's estate) वगैरह।

इन कानुन के बारे में जब जैन लोगों के मुकद्दमात कोर्ट में पेश होते थे तो शुरू में जैनीयों ने अपने जैन लॉ को न्यायालयों में पेश करने का विरोध किया। इसका विपरीत परिणाम यह हुआ कि न्याय करनेवाले (Judges) न्यायाधीशों ने यह निर्णय कर लिया कि जैनीयों का कोई स्वतंत्र जैन कानून नहीं है। परंतु न्यायालयों का इसमें कुछ अपराध नहीं। अगर जैन समाज जागृत रह कर अपना कानून अदालत में पेश करते तो उसकी मान्यता भी हो सकती थी। इस विषय में हिंदुओं ने बुद्धिमानी से काम लिया। और हिंदु लॉ के बारे में जो कुछ हिंदु शास्त्र थे अदालत में पेश किये और उनके आधारपर न्यायालयों में फैसले भी होते रहे।

उसी तौरपर मुस्लिम मौलवी और काजी मुस्लीम लॉ को (Mohammedan law) कोर्ट में पेश करते गये और विरासत वगैरे मामलत में मुस्लिम लॉ के अनुसार फैसले होते गये।

२. जैन लॉ का संकलन

श्री जुगमंदरलालजी जैन बॅरिस्टर ने (जो इंदोर हायकोर्ट के चीफ जज्ज भी थे) प्रथम बार इस दुरवस्था को देख कर जैन लॉ नाम का एक ग्रंथ तय्यार किया। जिसको १९१६ इ. में प्रकाशित कराया। लेकिन श्री जुगमन्दरलालजी को पर्याप्त अवकाश न मिलने से यह ग्रंथ भी अपूर्ण रूप रहा।

इसके पश्चात् स १९२१ इ. में जब डॉ. गौर का हिंदु कोड (Hindu code) प्रकाशित हुआ उसमें जैनीयों को धर्म–विमुख हिंदु (Hindu) लिखा।

इस हिंदु कोड के कारण जैन समाज में हलचल मची। इसका विरोध करने के लिये 'जैन लॉ कमिटी' कायम हुई लेकिन दूर देशांतर से सदस्य वक्तपर एकत्रित न हो सके इसलिये यह जैन लॉ कमिटी भी अपने उद्देशों को पुरा न कर सकी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऐसी दुरवस्था हो गई। श्रीमान चंपतरायजी जैन बॅरिस्टर ने जैन लॉ का संकलन करके स. १९२६ इ. में इस पुस्तक को लंडन में प्रकाशित किया और भारत में वापिस लौटने के बाद 'जैन कानून' के नाम से स. १९२८ इ. में हिंदी में प्रकाशित किया।

'जैन लॉ' इस उद्देश से तय्यार किया गया कि जैन लॉ फिर स्वतंत्रतापूर्वक एक बार प्रकाश में आकर कार्य में परिणत हो सके, और जैन लोग अपने हि कानून के पाबंद रहकर अपने धर्म का समुचित पालन कर सके।

'जैन के' मित्र संपादक श्री मूलचंदजी कापडिया ने इस हिंदी जैन कानून को पुनरपि स. १९६९ इ. में सुरत से प्रकाशित किया है।

'जैन लॉ' की नीति (system) एक ऐसे दृष्टिकोन पर निर्भर है जिसमें किसी दूसरी रीतिक्रम (system) के प्रवेश कर देने से सामाजिक विचार और आचार की स्वतंत्रता का नाश हो जाता है और जैन धर्म के पालन में शिथिलता पैदा होती है।

जैन लॉ को, हिंदु लॉ या मुस्लिम लॉ को जो श्रेणी (Status) प्राप्त हुअी है वैसी श्रेणी प्राप्त नहीं हो सकी।

जब कोई रीतिरिवाज (customs and usage) हिंदु लॉ से भिन्न होना जैन लोग बयान करें तो उसको साबित करने का उत्तरदायित्व जैनियों पर ही रखा जाता है। लेकिन यह बहुत कठिन काम हो गया है।

कानून के जाननेवाले जानते हैं कि किसी विशेष रिवाज को प्रमाणित करना बहुत प्रयत्नसाध्य कार्य है। सैंकडो साक्षी और उदाहरणों द्वारा इसको साबित करने की आवश्यकता होती है। जो छोटे मुकद्दमेवालों की हैसीयत के बाहर होता है।

इतना कष्ट लेने के बाद भी, न्याय मिलेंगा ऐसा विश्वास नहीं रहता।

इस प्रकार और भी हानियां है। वे उसी समय दूर हो सकेंगी जब जैन लॉ पर अदालत में अमल होता रहेगा।

३. जैन धर्मप्रणालि और हिंदु धर्मप्रणालि में कुछ भिन्नताएँ

(१) जगत् को (विश्व को) जैन अनादि मानते हैं; यह जगत् ईश्वर निर्मित है ऐसा हिंदु मानते हैं।

(२) जैन तीर्थंकरों की–[परमात्मा पद को प्राप्त होनेवाले महापुरुषों की] मूर्तियाँ मंदिरों में स्थापन करके जैन उनकी पूजा करते हैं। लेकिन हिंदु परंपरा से प्रयत्नसाध्य परमात्मपद की कल्पना नहीं है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन मत में देवताओं को भोग लगाना और देवता अपनी इच्छा तृप्ति करें ऐसी प्रार्थना करना मिथ्यात्व माना जाता है, लेकिन हिंदु मत में देवताओं को प्रसन्न करना, उनसे अर्थ प्राप्ति की सिद्धि कल्पना है।

(३) हिंदु वेद को मानते हैं; जैनी वेद को नहीं मानते।

जैन धर्म में सम्यग्दर्शन–सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र का पालन करना इसको धर्म कहा गया है।

चार घातीया कर्म का नाश होने के बाद केवलज्ञान प्राप्त होता है उसी अवस्था को अरिहंत कहते हैं। ऐसे केवलज्ञानीयों ने जिन तत्त्वों का प्रतिपादन किया है उन पर अटल श्रद्धा रखना इसे सम्यग् दर्शन कहते है। यथार्थ ज्ञान को सम्यग्ज्ञान कहते हैं। वह ज्ञान चार प्रकारों में पाया जाता है। प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग। पांच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत को पालन करने से गृहस्थ का सम्यक् चारित्र होता है।

४. किसी बच्चे को दत्तक लेना केवल व्यावहारिक दृष्टि से (In a Secular way) जैन मानते हैं।

पारलौकिक सुख के प्राप्ति की इच्छा से जैन दत्तक को नहीं लेते। जैन मतानुसार पुत्र के होने न होने से कोई मनुष्य पुण्य पाप का भागीदार नहीं बनता। तीर्थंकर पुत्र न होते हुये भी मुक्त स्थिति को प्राप्त हुये है। और बहुत से मनुष्य पुत्रवान होते हुये भी अपने कर्मानुसार नरक गति को प्राप्त हुए हैं। हिंदु धर्म में दत्तक लेना एक धर्मविधि है। पारलौकिक सुख प्राप्त करने के हेतु से हिंदु धर्म में दत्तक लेना अवश्य समझते हैं।

५. **स्त्रियों के अधिकार**—पति से प्राप्त हुये जायदाद पर जैन लॉ के अनुसार पूरे होते हैं परन्तु हिंदु लॉ के अनुसार स्त्रियों को सिर्फ जीवन पर्यंत (Life estate) का अधिकार होता है।

६. हिंदु लॉ में एकत्र कुटुंब और अविभाजित एस्टेट (Joint family & Joint property) की प्रशंसा की गई है लेकिन जैन लॉ में उसका निषेध न करते हुए विभक्त दशा का आग्रह किया गया है ताकि धर्म की वृद्धि हो।

भारत स्वतंत्र होते के बाद हिंदु लॉ के विरासत और दत्तक सम्बन्धी मान्यता में बहुत फरक हो गया है।

१. हिंदु विरासत का कायदा स. १९५६ (Hindu Succession Act 1956) अमल में आया है। बुद्ध, जैन और सीख धर्मी लोक भी इस कानून के पाबंद किये गये हैं। इस कानून के दफा १४ के लिहाज से किसी हिंदु स्त्री के कब्जे में जो कुछ जायदाद आई हो उस जायदाद की वह स्त्री पूर्ण मालिक बन जाती है।

२. हिंदु दत्तक और भरण पोषण का कायदा १९५६ (Hindu Adoption & Maintenance Act 1956) पास हुआ है इस कानून के दफे ११ के लिहाज से दत्तहोम का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करना जरुरी नहीं बतलाया गया, और दफा १२ के लिहाज से दत्तक पुत्र दत्तक माता-पिता की इस्टेट में उनकी हयाती में कोई हक्क प्राप्त नहीं कर सकता। सिर्फ रिश्ते के लिहाज से दत्तक पुत्र समझा जाता है। इन दोनों नये कानून में जैन लॉ की मान्यताओं को अंशतः स्वीकार किया है।

५. जैनीयों के बारे में न्यायालयों के कुछ महत्त्व के फैसले

(१) ऑल इंडिया रिपोर्टर १९६२ सुप्रीम कोर्ट पान १९४३ (A. I. R. 1962 S. C. 1943)

मुन्नालाल बनाम राजकुमार वगैरह—

इस मुकद्दमे के दोनों पार्टी जैन थे। जायदाद के विभक्त करने का (Partition suit) दावा था। एकत्र कुटुंब के विधवा स्त्री ने दत्तक लिया था। उस विधवा ने दत्तक लेने के लिए अपने पति की आज्ञा भी (permission) नहीं ली थी। कुटुंब के अन्य लोगों ने इसका विरोध किया था। तहत की कोर्ट ने जिसको दत्तक लिया था उसको मंजुर किया और वही फैसला हायकोर्ट और सुप्रीम कोर्ट से बहाल रखा गया। विभाजन की प्राथमिक डिक्री (preliminery) विधवा के हक्क में हुई थी। लेकिन प्रत्यक्ष बटवारे (Actual position) के पहिले ही विधवा का स्वर्गवास हुआ तो भी विधवा का वारस पुत्र उस विभाजन में अपना हिस्सा पा सकता है ऐसा सुप्रीम कोर्ट ने फैसला किया।

(२) ऑल इंडिया रिपोर्टर सन १९६८ कलकत्ता ७४ (A. I. R. 1961 Cal. 74)

कमीश्नर वेल्थ हॅक्स प. बंगाल बनाम चंपाकुमारी सिंधी—

इस मुकद्दमे में कलकत्ता हायकोर्ट ने फैसला किया कि जैन वेदों को नहीं मानते। हिंदुओं के क्रिया कांड को जैन नहीं स्वीकार करते। हिंदुओं से धर्म-विमुख हिंदु (Hindu) जैनियों को मानना सही नहीं है।

जैन हिंदु नहीं है इस वजह से—

हिंदु शादी का कायदा १९५५ (Hindu marriage Act 1955) और हिंदु विरासत का कायदा १९५६ (Hindu succession Act 1956) जैनीयों को यह कानून लगाया गया है। इससे मालूम होता है कि हिंदु से जैन अलाहिदा हैं।

इस मुकदमे में हिंदु एकत्र कुटुंब के समान जैन एकत्र कुटुंब पद्धति नहीं है ऐसा तय किया गया है।

अंतिम निवेदन

न्यायालयीन फैसलों के अनुसार जैन धर्म स्वतंत्र है और हिंदुधर्म भी एक स्वतंत्र धर्म है; परंतु जैनीयों को हिंदु धर्म से विमुख समझना सही नहीं है। जैनीयों का तत्त्वज्ञान और उसके श्रद्धान के अनुसार जो जैन समाज रचना है ऐसी समाज व्यवस्था जैन धर्मप्रणाली के अनुसार कायम रह सके ऐसा प्रयत्न करना हर जैनीका कर्तव्य है और इसी ध्येय पूर्ति के लिये जैन लॉ पर अमल हो सके ऐसा समुचित प्रयत्न होना जरूरी है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org